ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-9* December-2020
Anthology : The Research

राजस्थानी गद्य शैली का विकास

Rajasthani Prose Style Development

Paper Submission: 15/12/2020, Date of Acceptance: 27/12/2020, Date of Publication: 28/12/2020

सीताराम मीना
सह आचार्य,
हिन्दी विभाग,
स्व.राजेश पायलट राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
बांदीकुई राजस्थान, भारत

सारांश

यह है कि शैली को व्यक्तित्व से पृथक नहीं किया जा सकता है। साहित्यकार का जीवन, जीवन नही है, अपितु साहित्य ही उसका अपना जीवन है।

शैली के क्षेत्र का निर्धारण करने पर यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति (लेखक), भाषा, विषय, पाठक, देश–काल एवं जलवायु शैली के मूल स्त्रोत है जो शैली का परिनिष्ठित स्वरूप निर्धारित करते है। शैली लेखक, विषय अथवा भाषा का साध्य नहीं है, साधन है, किन्तु वह साहित्य की मौलिकता को सुरक्षित रखने का कार्य करती है। अतः यह निश्चित रूप से स्वीकार कियाजा सकता है कि ''शैली की अनुपस्थिति में'' साहित्य जीवित नहीं रह सकता। ''शैली'' के तात्विक विवेचन के अन्तर्गत उपर्युक्त समस्त तत्वों का अध्ययन आवश्यक है। शैली से हमारा तात्पर्य मात्र गद्य की विशिष्ट अभिव्यक्ति है, अतः इस दृष्टि से जो उपकरण गद्य की अभिव्यक्ति को विशिष्टता प्रदान करते है, उनका सम्यक विवेचन ही शैली का क्षेत्र माना जायेगा।

It is that style cannot be separated from personality. The life of a writer is not life, but literature is his own life. When determining the area of the genre, it is known that the person (writer), language, subject, reader, country-time and climate are the original sources of the style that determine the style of the genre. Style is not the endorsement of the writer, subject or language, but a means, but it serves to preserve the morality of literature. Therefore, it can certainly be accepted that "literature cannot survive in the absence of style". Under the elemental discussion of "style", it is necessary to study all the above elements. By style we mean only the specific expression of prose, so in this view, the proper interpretation of the tools which give the expression of prose will be considered as the field of Sheli.

मुख्य शब्द : राजस्थानी भाषा, शैली, चारण, बात साहित्य, वंशावली, अभिव्यक्ति, सामन्तवादी व्यवस्था, अप्रभंश, प्राकृत संस्कृत, वैदिक संस्कृत, वैदिक भाषा।

Rajasthani Language, Style, Bard, Talk Literature, Genealogy, Expression, Feudal System, Obsolescence, Prakrit Sanskrit, Vedic Sanskrit, Vedic Language.

प्रस्तावना

9 वीं शताब्दी से पूर्व देशी भाषाओं पर अपभ्रंश का इतना प्रभाव रहा है कि उनके स्वतंत्र अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। अन्य स्त्रोतों से भी इस काल से पूर्व राजस्थानी के प्रामाणिक साहित्य की जानकारी नहीं मिलती। सम्वत् 835 में मुनि उघोतन सूरि द्वारा रचित "कुवलय माला" में राजस्थानी का परिचय मरूभाषा के रूप में मिलता है। ये कल्पना अवश्य ही की जा सकती है कि इससे पूर्व भी राजस्थानी में संभवतः रचनाएं हुई हो, किन्तु लिपिनिष्ट रचना के अभाव में कोई निश्चित दृष्टिकोण अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। राजस्थानी का प्रारंम्भिक साहित्य अधिकांश श्रुतिनिष्ठ में परम्परा में ही प्रचलित रहा। काव्य का विकास तो लिपिबद्व अवस्था में 10वीं शताब्दी के पश्चात प्रारंभ हो चुका था किन्तु गद्य का प्रामाणिक रूप 13वीं शताब्दी से ही मिलता है। राजस्थानी का प्रारिम्भक गद्य साहित्य विभिन्न साहित्यिक रूपों में द्रुतगति से विकसित होता रहा किन्तु आधुनिक राजस्थानी गद्य की प्रगति वर्तमान में परिवश में संतोषजनक नहीं कही जा सकती। हिन्दी गद्य की रचना तथा भाषायी एकता को पुष्ट करने के लिये आधुनिक राजस्थानी साहित्यकार अपने धरातल से ऊपर अवश्य उठा किन्तु इससे राजस्थानी को गहरी क्षति उठानी पडी।

अध्ययन का उद्देश्य

राजस्थानी शैली के विकास की विवेचना के पीछे हमारा उद्देश्य राजस्थान की बोली, भाषा पर अप्रभंश, प्राकृत, संस्कृत व वैदिक भाषा के प्रभाव को बताना है। भाषा को जीवन से जोड़कर उसे अधिक ठोस भूमि पर प्रतिष्ठित करने का काम शैली ही करती है। किसी क्षेत्र विशेष की सांस्कृतिक विरासत को बनाये रखने के लिये वहाँ की भाषा को समृद्ध होना आवश्यक है जिसके अन्तर्गत वहाँ की प्राचीन शैलियाँ, चारण साहित्य, बालाबोध, बाल साहित्य, ख्यात साहित्य, डायरी शैली साथ ही साथ उस क्षेत्र की स्थानीय बोली भाषा का वर्णन करना आवश्यक है। इस शोध सारांश में उपरोक्त सभी विवेचनो के वर्णन का उद्देश्य राजस्थानी शैली के सन्दर्भ में जोड़कर देखना हमारा उद्देश्य रहा है

शैली– भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण

सामान्य दृष्टि से शैली का प्रयोग विविध क्षेत्रों में व्यापक रूप से किया जाता है किन्तु साहित्य में इसका प्रयोग विशिष्ट भाषा की अभिव्यक्ति–प्रकिया के संदर्भ में ही किया जाता है क्योकि भाषा अभिव्यक्ति का साधन है और शैली उस साधन की विधि के समान प्रकट होती है। भाषा की शुद्वता, सामयिकता, सार्थकता एवं सुन्दरता उसकी विशिष्ट अभिव्यक्ति पद्वति (शैली) पर ही आधारित है। भाषा को जीवन से जोडकर उसे अधिक ठोस भूमि पर प्रतिष्ठित करने का काम शैली ही करती है। शैली ही दुरूह को सुगम एवं अस्वाभाविक को स्वाभाविक बनाती है। विषय अपने आप में महत्वपूर्ण, सुगम अथवा स्वाभाविक बनाती है।

"शैली" शब्द अत्यन्त प्राचीन है और इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के शैली (शील) शब्द से मानी जाती है। संस्कृत में इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम कुल्लूल भट्ट ने मनुस्मृति की टीका लिखते समय किसी सूत्र की व्याख्या के लिए किया था। 'शील' शब्द व्यक्ति की चारित्रिक एवं उसके गुणों आदि की विशिष्टताओं से है प्रमाणिक हिन्दी शब्द कोष में श्री रामचन्द्र वर्मा ने 'शैली' शब्द का अर्थ चाल, ढ़ंग, प्रणाली, रीति, प्रथा एवं वाक्य रचना के विशिष्ट प्रकार से लिया है। डॉ. गणपति चन्द गुप्त ने "शैली का अर्थ व्यक्ति की क्रियात्मकता से लिया है"।[1]

हिन्दी साहित्य में शैली शब्द का प्रयोग अंग्रेजी साहित्य के 'स्टाईल' शब्द के प्रभाव से प्रारम्भ से प्रारम्भ हुआ है। प्राचीन हिन्दी काव्यशास्त्र में शैली के समान अर्थ देने वाला शब्द 'रीति' प्रचलित था। स्टाइल शब्द लेटिन भाषा के Styles से ही बना है। Stylus शब्द का अर्थ है– लिखने की नोकदार कलम।

शैली की परिभाषा

भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य के विद्वानों ने साहित्य की शैली की परिभाषा अपने–अपने दृष्टिकोण से प्रस्तुत की है।

अरस्तु के अनुसार–''शैली से वाणी में वैशिष्ट्य का समावेश होता है।''[2]

वाणी की विशिष्टता से अभिप्राय अभिव्यक्ति मूलक श्रेष्ठता से है।

प्लेटो– जब विचार को तात्विक रूपाकार दे दिया जाता है तो शैली का उदय होता है।''[3]

बफन– ''शैली स्वयं की व्यक्ति है, वह उसकी प्रकृति का एक अंग है"। [4]''बफन ने शैली के निर्धारण में व्यक्तित्व को आधार माना है। यह बात निष्चित रूप से स्वीकार की जा सकती है कि व्यक्तित्व शैली का निर्धारण करता है। विषय और उसकी अभिव्यक्ति बहुत कुछ व्यक्ति पर ही निर्भर करते है।

चेस्टर फील्ड– शैली विचारों की वेशभूषा है।[5]

शापन हावर– 'शैली आत्मा की मुखाकृति शास्त्र है। [6]

हड़सन –'शैली मूलतःएक वैयक्तिक गुण है।[7]

राजस्थानी गद्य की विभिन्न प्राचीन शैलियों का तात्विक विवेचन

राजस्थान साहित्य में गद्य लिखने की परम्परा का विकास 14वीं शताब्दी से पूर्व ही हो चुका था, किन्तु अपभ्रंश के प्रभाव से युक्त हाने के कारण उसे निश्चित रूप से विशुद्व राजस्थानी गद्य का रूप नहीं माना जा सका। श्री नारायण सिंह भाटी ने ''राजस्थानी साहित्य का आदिकाल '' शीर्षक ग्रन्थ (परम्परा) की भूमिका में यह संकेत किया है कि ''राजस्थानी गद्य के उदाहरण 12वीं शताब्दी तक में मिलते है। इसी संदर्भ में श्री अगरचन्द जी नाहटा ने इस बात का उल्लेख किया है कि 11वीं शताब्दी की अपभ्रंश रचनाओं में राजस्थानी भाषा के विकास के चिन्ह मिलते है। [8]

राजस्थान गद्य का प्राचीनतम उदाहरण बीकानेर के नाथूसर गॉव के एक शिलालेख पर अंकित है, जिसका समय संवत 1280 दिया गया है। इसका उल्लेख राजस्थानी की प्रारम्भिक गद्य रचनाओं के संदर्भ में आगे किया जा रहा है। राजस्थानी गद्य का विकास 13वीं शताब्दी के पश्चात् द्रुतगति से होता गया, किन्तु 15वीं शताब्दी तक की रचनाओं पर अपभ्रंश का प्रभाव बना रहा।

16वीं शताब्दी तक राजस्थानी और गुजराती का स्वतन्त्र रूप से निर्धारित नहीं हो सका था। इन्हें प्राचीन राजस्थानी के नाम से पुकारा जाता था, किन्तु इस काल में रचित सम्पूर्ण गद्य साहित्य को प्रकाश में लाने का प्रयास नहीं किया गया। कुछ भाषाविद् पश्चिमी राजस्थानी का समय 15वीं शताब्दी तक ही मानते है, क्योकि उनके मतानुसार आधुनिक राजस्थानी का रूप 16वीं शताब्दी से प्रारम्भ हो गया था, किन्तु भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह स्वीकार करना होगा कि गुजराती तथा राजस्थानी में इस समय तक स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित नहीं किया था। 16वीं शताब्दी तक की भाषा प्राचीन राजस्थानी के ही निकट थी तथा उसका प्रभाव आंशिक रूप से 17वीं शताब्दी तक की रचनाओं पर पडा है। भाषाओं का विकास क्रमिक होता है। शैली के तात्विक विवेचन के संदर्भ में शैली के मूलभूत तत्वों, जैसे– व्यक्तित्व, भाषा, विषय–वस्तु, शब्द, ध्वनि आदि पर विचार किया गया है, किन्तु यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि प्राचीन राजस्थानी गद्य में लेखको ने मात्र सांमती व्यवस्था को आधार बनाकर उनमें सम्बन्धित विषयों पर अधिक लिखा है, अथवा जैनाचार्यो ने अपने धर्म पर प्रकाश डाला है। सामान्य जन जीवन का उल्लेख मात्र

कुछ कलात्मक बातों में ही किया गया है। विषय वस्तु की भिन्नता के दर्शन होते है, किन्तु उनमें सामान्य जन–जीवन का अभाव है।

जैन गद्य साहित्य की परम्परा

राजस्थानी गद्य साहित्य पर जैन गद्य साहित्य परम्परा का प्रमुखतया प्रभाव रहा है, जिसका मुख्य कारण यह है कि राजस्थान से जैन धर्म का सम्बन्ध बहुत पुराना है। अनेंक जैन तीर्थकर धार्मिक उद्देश्य से यहां पधारते थे तथा अपने आवास काल में वे धार्मिक प्रचार के माध्यम से साहित्य की सेवा भी करते थे। आज भी हजारो जैन श्रावक राजस्थान प्रदेश में इसी उद्देश्य के लिए भ्रमण करते है। जो धर्म प्रचार का कार्य एक मात्र यहां की भाषा (राजस्थानी) में ही करते है।

चारण गद्य साहित्य

राजस्थानी गद्य के विकास में जहां जैन साहित्यकारों का योगदान है वहां चारण साहित्यकारों के प्रभावशाली गद्य साहित्य को भुलाया नहीं जा सकता है। मुहणौंत, नैणसी, बांकीदास एवं दयालदास सिंढायच जैसे साहित्यकार एवं इतिहासकार शैलीकार की दृष्टि से राजस्थानी गद्य में हमेशा अमर रहेगें। चारण गद्य साहित्य में मूलतः जातीय साहित्य तो है किन्तु वह राजस्थानी लोक जीवन के अधिक निकट है, अतः जातीय साहित्य होते हुये भी उसे स्वीकार किया जा सकता है।

टीका एवं अनुवाद पद्वति

टीका एवं अनुवाद राजस्थानी गद्य साहित्य का अमौलिक साहित्य है जो टीका एवं अनुवाद के रूप में हमें मुख्यतः संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य से मिला है। संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश में रचित विद्वानों का धार्मिक एवं उपदेशात्मक साहित्य जनसाधारण के लिये जब कठिन हो गया तो उनके विषयों ने सामान्य बोलचाल की राजस्थानी भाषा में अनुवाद एवं व्याख्याऐं प्रस्तुत की।

बालावबोध

के शाब्दिक अर्थ से ही उसके उपयोग एवं महत्व की ध्वनि प्रकट होती है कि उसके बालक को किसी विषय का ज्ञान कराया जायें। बालावबोध पद्वति के अन्तर्गत रचित अधिकांष रचनाएं कथात्मक एवं धार्मिक होती थी। यह वह मार्ग था जिसके माध्यम से जैन धर्म के सिद्वान्तों को जनसाधारण तक पहुॅचाया जाता था। इनकी सरल, सरस, सहज एवं बोधगम्य शैली से मन्द बुद्वि भी जैन धर्म के स्त्रोत, चरित्रों एवं दार्षनिक को हदयंगम कर लेता था।

बात साहित्य

राजस्थानी बात का साहित्य राजस्थान की थाती है। स्वतन्त्र गद्य के रूप में राजस्थानी भाषा में प्रथम इतिहास, बात, प्रसंग एवं दास्तान रूप में गद्य साहित्य उपलब्ध होता है। बात और दास्तान कथा साहित्य सम्बद्व है तथा ख्यात और प्रसंग इतिहास सम्बन्धित है राजस्थानी में बात साहित्य की परम्परा 13वीं शताब्दी से ही प्रारंभ हो चुकी थी किन्तु सर्वाधिक साहित्य की रचना 16वीं शताब्दी में हुई इस संदर्भ में डॉ. सहल की मान्यता है कि "मेरा विश्वास है कि वैदिक युग की आख्यान परम्परा भारत के सभी राज्यों की अपेक्षा राजस्थान में सर्वाधिक सुरक्षित रही है और वह आज भी अक्षूण्ण रही है। शौर्य, देश–भक्ति, धर्म–रक्षा, दानशीलता आदि के असंख्य गद्य पद्यात्मक आख्यान राजस्थान में प्रचलित है।"[9]

वर्ण्य विषय की दृष्टि से यह स्वीकार किया जा सकता है कि "राजस्थानी बातों में राजपूत समाज का चित्रण विशेष रूप से हुआ है। उसका स्पष्ट कारण है कि राजपूत शासक जाति रही है। अनेक राज्यों के उत्थान पतन की कहानी राजपूतों के साथ जुडी है।"[10]

वर्णनात्मक शैलीः में राजस्थानी शैली का वर्णन इस प्रकार किया गया है :–

"मालवौ देश माहें धारा नगरी। तठै पंवार उदियादित राज करे। नै तिणरै राणियां दो, तिण माहें पटराणी वाघेली। तिणरै कंवर रिणधवल हुवो। दूजी राणी सोलखिणी। तिका दुहाकण। तिणका कंवर को नांव जगदेव दीघौ। सांवलै रंग, पिण ज्योति धारी नै रिण धवल राजरौ धणी। यों करता बरस 12 मोहे जगदेव हुवौ। तदै राजा कह्यो संसार माहै बेटा समान कोई वस्तु नहीं"।[11]

दृश्य चित्रित करने वाले मनोरंजक वर्णनः राजस्थानी शैली में इस प्रकार किया गया हैः–

"रात घडी एक दो गई। तढ डंको सुणियो। तरै योगेसर जाणियों कोई सिरदार आवै छः तिसै हाथी री वीर घंट सुणां, तुररी सहनाई सुणी, घोडा की कल्हल् सुणी। चराकां सौ–एक मूंढा आगै हुवां चंवर ढुलता हाथी माथै बैठो सिरदार दीठौ। तिसें कैइक असवार महिलां आया। तिसै फरास आय मैलां आगे चोक माहे जाजम दुलीचा बिछाया, गिलमां बिछई, तकिया लगाया। तिसै तेजसी जी गादी तकियां आप बैठा। जोगेनर तमासा देखे छै।"[12]

संवादात्मक शैली का राजस्थानी में इस प्रकार किया गया है :–

"बगसी राम कहे–छै– परभात हूवो, मंनर झालर घंटा बजायो।

हीरां कहै छै–बालम, परभात नहीं, बधाई बागै छै। अऊत घर पुत्र जायो।

पुरोहित कहे छै–प्यारी प्रभात हुई मुरगी बोल रही छै।

हीरां कहै छै–कुकडा मिलाप नहीं छै।

प्रोहित कहै छै– प्यारी, प्रभात हुवौ, चडियां बोले छं।[13]

ख्यात साहित्य

शाब्दिक दृष्टि से स्पष्ट है कि "ख्यात" का अर्थ ख्याति से है किन्तु भाषा की ध्वनिगत परम्परा के अनुसार राजस्थानी उसे "ख्यात" ही कहते है। श्री साकरिया जी का मत है कि "राजस्थानी" में ख्यात शब्द प्रायः इतिहास के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता रहा है। ख्यात मूलतया संस्कृत भाषा का शब्द है। यह "ख्या"–प्रकथने धातु रो– "क्त" प्रत्यय होने पर निष्पन्न होता है।[14]

मुहंता नैणसी री ख्यात में

नैणसी राजस्थान ख्यात–लेखक है जिन्होनें राजस्थान के इतिहास को पर्याप्त सामग्री प्रदान की।

पीढियावली

जैसा कि नाम से ही अर्थगत ध्वनि स्पष्ट होता है कि इसमें किसी राजवंश का क्रमिक विवरण दिया जाता था। पारिवारिक पीढ़ियों का वंशानुक्रम विवरण इस प्रकार की रचनाओं में होता था। इसे वंशावली के नाम से भी

पुकारा जाता है तथा "ख्यात" में इस प्रकार पीढियों के विवरण देने की परम्परा थी।

दफ्तर बही (डायरी शैली)

इसमें जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं को अपनी ख्याति में अंकित कराते थे। जिनसे इतिहास को अनेक वास्तविक आधार एवं तथ्य मिलते थे किन्तु प्रतिदिन की घटनाओं को सुरक्षित रखने के लिये राजस्थान में **"दफ्तर** बही" लिखने की परम्परा प्रचलित थी।

ब्याह की बही राजस्थानी में इस तरह लिखी जाती थी। जोधपुर श्री जी साहिब अजीतसिंघ जी बेटी सूरज कंवर री शादीः महाराजा श्री मानसिंह जी री बाई री शादी व अन्य शादियों का वर्णन सन् 1776–"महाराजा श्री अजीतसिघ जी रे राणी व भटीयांणी जी जैसलमेर रा रावल अमर सिंहजी री बेटी तिणारे बाई सूरज कंवर बाई तिणा नैच्यां विर राजाजी श्री सवाई जै सिंघ जी राजा बिसन सिंघ जी रा बेटा बकाजीसिंघ जी रा पोता तिणा ने परणाय जोधपुर सुर सागर विराजै तरें विहाय कीयो।[15]

राजस्थानी पत्र साहित्य और शैली

में राजस्थानी गद्य साहित्य के विकास में पत्रों का विशेष योगदान रहा है। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक भेजे गये लिखित संदेश को पत्र कहते है। पत्र हार्दिकता का प्रतीक है। प्रारंभ में किसी मध्यस्थ, संदेश वाहक, पत्र वाहक, दूत अथवा कासिद के माध्यम से पत्र प्रेषित किये जाते थे। किन्तु आज यह विधि पूर्णतया बदल चुकी है। पत्र भेजने के उद्देश्य भिन्न–भिन्न हो सकते है किन्तु इसमें मैत्री पूर्ण भावनाएं ही अन्तर्निहित रहती है। भाषा शैली की दृष्टि से भी इनका विशेष महत्व है।

आधुनिक राजस्थानी गद्य शैलियों का आर्विभाव

भाषा मानव जीवन के विकास का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। इसी साधन के बल पर हमें एक दूसरे के निकट आने का अवसर मिला है। साहित्य, रूप–प्रकृति, प्रवृति एवं परम्परा की दृष्टि से राजस्थानी गद्य आर्य भाषाओं में अपना विशेष स्थान रखता है। मरू भाषा, मरू वाणी, डिंगल, मारवाड़ी और राजस्थानी नामों को समय–समय पर ग्रहण कर उसने विस्तृत भाव भूमि पार कर एक परिनिष्ठित साहित्यिक रूप प्राप्त किया है। राजस्थानी भाषा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि उसके अपने संस्कार है, अपनी भाव भूमि है। अनेक आरोह एवं अवरोह को पार करती हुई भी वह एक जीवित भाषा है। उसका सर्वस्व अपना है। उसके साहित्य का सम्यक संवर्धन ही उसकी सफलता है एवं उसके जीवित रहने का कारण है। उसका विकास नागरी अपभ्रंश से हुआ है जिसके पीछे अपभ्रंश, प्राकृत, संस्कृत एवं वैदिक भाषा के पैतृक संस्कार है।

राजस्थान गद्य की परम्परा हिन्दी भाषा के गद्य की अपेक्षा अधिक प्राचीन काल से तथा क्रमबद्व रूप में मिलती है। गद्य के विविध विषयगत रूपों का चरम विकास हुआ एवं उसकी अभिव्यंजना शक्ति प्रौढ़ता की सीमा तक पहुंच गई। राजस्थानी गद्य में अनेक आधुनिक आर्य भाषाओं के गद्य का मार्ग प्रशस्त किया है। 14वीं शताब्दी से आज तक का गद्य साहित्य अनेक रूपों, विधाओं एवं शैलियों के रूपों में उपलब्ध है। जिस समय हिन्दी में गद्य का विकास नहीं के बराबर हुआ था उस समय राजस्थानी भाषा अपने गद्य साहित्य के क्षेत्र में विभिन्न विधाओं के अन्तर्गत एक विशाल कोष स्थापित कर चुकी थी।

राजस्थानी गद्य की परम्परागत प्राचीन विधाओं और शैलियों का समाप्ति का एक कारण यह भी रहा है कि ख्यात, वचनिका, दवाबैत, विगत, वंशावली, पीढियावली एवं ऐतिहासिक टिप्पणी आदि पूर्णतया साम्राज्यवादी व्यवस्था तक ही सीमित थे। ऐतिहासिक दृष्टि से चाहे यह साहित्य कितना भी उपयोगी क्यों न रहा हो किन्तु बात साहित्य को छोडकर शेष का सामान्य पाठक के लिए कोई महत्व नहीं। राजा, महाराजाओं, बादशाहों एवं सामन्तों को महत्वपूर्ण कार्यो से लेकर सामान्य कार्यो का लेखा जोखा इस साहित्य की विषय वस्तु है। नवीनता के नाम पर शून्य है एवं सामान्य जन–जीवन को कोई स्थान नहीं दिया गया। इस साहित्य को यदि जातीय साहित्य की संज्ञा भी दी जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

आज पाठकों में यह धारण बल पकडती जा रही है कि 'राजस्थानी एक सामन्तवादी व्यवस्था की भाषा रही है एवं उसके आदिकालीन साहित्य में सामान्य जन–जीवन का चित्रण नहीं हुआ है।' कथा का दूसरा पक्ष संगत है किन्तु प्रथम मात्र भ्रम है। भाषा किसी विशिष्ट जनसमूह तक सीमित नहीं रहती वह अभिव्यक्ति का साधन है। उसकी सीमाएं एवं क्षेत्र कभी निर्धारित नहीं किये जा सकते। युगानुकूल परिस्थितियों के अन्तर्गत साहित्य सृजन के क्षेत्र में वह एक निश्चित क्षेत्र तक अवश्य रही है किन्तु विशिष्ट वर्ग की भाषा नहीं।

राजस्थानी भाषा के पास अपनी पुरानी साहित्य सम्पत्ति प्रचुर मात्रा से है किन्तु बीच में कुछ समय के लिए उसका विकास अवरूद्ध हो गया था। परम्परागत गद्य साहित्य की विद्याओं का लोप हो गया। पुनर्जागरणकाल आया किन्तु सब अपने आप में जैसे नया ही था। राजस्थानी के इस अंधकार युग में देश की प्रांतीय भाषाएं बहुत आगे बढ गई थी, तथा उन्हे राष्ट्रीय गौरव भी मिल चुका था किन्तु राजस्थानी का यह एक दुर्भाग्य रहा है कि प्रारंभ में उसके अधिकांश साहित्यकार केवल राजाश्रय में रह कर ही साधना कर रहे थे, स्वतन्त्र वातावरण में बहुत ही कम थे। ज्यों ही सामन्तवादी व्यवस्था समाप्त हुई, साहित्य साधना भी रूक गई। फिर भी प्रसन्नता की बात है कि राजस्थानी की प्रबुद्व साहित्यकारों ने युद्व की प्रवृत्तियों को समझा है और राजस्थानी की साहित्यिक वृद्धि करने में जुट हुये है। विकास के ये शुभ लक्षण है। यह एक विशेष प्रसन्नता की बात है कि राजनैतिक स्तर पर उलझने उपस्थित किये जाने पर भी राजस्थान में किसी प्रकार का भाषा कलह नही है। राजस्थान साहित्यकार के लिए भी यह आवश्यक है कि वह क्षेत्रीय संघ को छोडकर अपना दृष्टिकोण विस्तृत करें। लिखते समय उसके सामने यह दृष्टिकोण होना चाहिए वह मात्र राजस्थानी के लिए ही नहीं लिख रहा है। प्रारंभ में ही स्पष्ट किया जा चुका है कि 19वीं शताब्दी के अंत तक राजस्थानी गद्य की परम्परागत विधाओं का ह्रास हो चुका था। पुनर्जागरण काल में राजस्थानी गद्य नये साहित्यिक रूप लेकर प्रकट हुआ।

उपसंहार

भाषा के साहित्य की प्रकृति, परम्परा और लोक चेतना युगीन परिस्थितियों से प्रभावित हुये बिना नही रह सकती। समग्रता से इन्हीं विशेषताओं को धारण करके भाषा–साहित्य आगे बढ़ता है। राजस्थानी, जिसने समय–समय पर नये–नये नाम धारण किये, नये नये साहित्यिक उपकूल धारण किये तथा अनेक संकटों से बचकर आज एक स्वतन्त्र समृद्ध भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। उसके साहित्यकारों ने न अधिकारों की मांग की और न सम्मान की किन्तु आज राजतंत्र ने भाषा सम्बन्धी जो नये मान, नये दृष्टिकोण निर्धारित किये गये है उनके अन्तर्गत राजस्थानी की उपेक्षा क्यों, उसका तिरस्कार क्यो? राजस्थानी की 6 करोड़ से अधिक संतान इस उपेक्षा को कभी सहन नहीं कर सकेगी।

अभिव्यक्ति के क्षेत्र में राजस्थानी के विभिन्न भावों, अनुभूतियों एवं विचारधाराओं का अध्ययन पूर्ववर्ती प्रकरणों में किया जा चुका है तथा इस तथ्य को बडी दृढ़ता से स्वीकार किया जा चुका है कि राजस्थानी भाषा के पास उसके उपने संस्कार है एवं अपनी भाव भूमि है तथा अभिव्यक्ति के क्षेत्र में उसके पास यथा तथ्य एवं प्रभावोत्पादक प्रेषण शक्ति है। शैली के आन्तरिक एवं बाह्य गुणों के आधार पर रागात्मक, बौद्धिक, कल्पना एवं भाषा सम्बन्धित जो तत्व अपेक्षित है ये राजस्थानी भाषा की प्रत्येक अभिव्यक्तिमूलक शैली में विद्यमान है। प्रारंभिक गद्य साहित्य से लेकर उसमें शैली का निर्धारण विषय की प्रकृति के अनुसार ही हुआ है। शब्दों की उसमें कमी नहीं रही। स्वतः जो शब्द संपर्क के कारण अन्य भाषाओं से मिले, उन्हें स्वीकार कर लिया। इसके शब्दों की शक्ति उसके अन्तर्निहित अर्थ को व्यक्त करने में सदा समर्थ रही है। अर्थ का बोद्य कराने वाले व्यापार अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना का उचित स्थल पर प्रयोग होता रहा है। प्रारंभ में भाषा शैली की प्रवृति सरलता की ओर रही है, अतः अभिधा का प्रयोग ही अधिक हुआ है। धीरे–धीरे गरिमा युक्त विषयों के प्रतिपादन में उसने लाक्षणिक और व्यंजनात्मक अभिव्यक्ति को भी ग्रहण किया। जीवन की सत्यता को अभिव्यक्त करने में यहां की शैली में कहावतों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों को व्यावहारिक रूप में स्वीकार किया है। इस प्रकार भाषा शैली सत्य एवं सौन्दर्य के गुण से मंडित होकर अभिव्यक्ति प्रक्रिया की ठोस भूमि पर अवस्थित हुई है।

प्रारम्भिक राजस्थानी गद्य की विविध विधाओं में शैली के विशिष्ट रूप मिलते है किन्तु उस समय के साहित्य पर पद्य का जो प्रभाव पडा वो तुकान्तता एवं लयात्मक सौन्दर्य को स्पष्ट करता है। 16वीं शताब्दी तक पद्य का प्रभाव किसी न किसी रूप में बना रहा साथ ही गुजराती के विशेष प्रभाव से राजस्थानी गद्य पूर्णतया मुक्त नहीं हो सका किन्तु 17वीं शताब्दी से राजस्थानी गद्य में भाषा वैज्ञानिक परिष्कार प्रारंभ हुआ। 19वीं शताब्दी तक का राजस्थानी गद्य विषय एवं शिल्प दोनो ही दृष्टियों से उन्नत कहा जा सकता है किन्तु हिन्दी के स्वरूप निर्धारण की समस्या ने उसके विकास को अवरूद्ध कर दिया, फिर भी यह कहा जा सकता है कि गद्य के विकास की दृष्टि से हिन्दी सदैव राजस्थानी की आभारी रहेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त –साहित्य की शैली, पृ. 209*
2. *डॉ. नगेन्द्र– अरस्तु का काव्य शास्त्र, पृ. 45*
3. *हिन्दी साहित्य कोष, पृ. 837*
4. *style is man's own, it is a part of his nature' Buffon.*
5. *style is the dress of thoughts'-Chesterfield, From the New Dictionary of Thoughts.*
6. *'style is the physiognomy of the soul: From Encyclopedia of Britannica.*
7. *'style…..is fundamentally personal quality.'Hudson,From An Introducation of the study of Literature,page34.*
8. *अगरचन्द नाहटा, परम्परा भाग 12 पृ 152*
9. *डॉ. कन्हैयालाल सहल 'गिर ऊचां ऊचा गढा' की भूमिका*
10. *राजस्थानी साहित्यः कुछ प्रवृतियां*
11. *सं.सूर्यकिरण पारीक, राजस्थानी वातां, जगदे पंवार री बात पृ. 1*
12. *वही, पाबूजी री बात पृ. 179*
13. *राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग 3, बात बगसीराम प्रोहित हीरां की पृष्ट 26*
14. *श्री साकरिया (बद्री प्रसाद) मुंहता नैणसी री ख्यात, भूमिका से।*
15. *ह.लि. बही– जोधपुर के राजा अजीत सिंह जी की–*